13

वाराणसी जिले की वाराही प्रतिमाः एक नवीन उपलब्धि

सुरेन्द्रकुमार यादव

वाराणसी (उत्तर प्रदेश) जिले में वरुणा नदी से लगभग 400 मीटर उत्तर दिशा में कुँरु नामक पुरास्थल (अक्षांश 25° 23° 46° उत्तर, देशान्तर 82° 44° 22° पूर्व) स्थित है। यह पुरास्थल छठी शताब्दी ईसा पूर्व से मध्यकाल तक की संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है। यहीं से एक वाराही प्रतिमा उपलब्ध हुई है, जो सामान्य रूप से प्राप्त वाराही प्रतिमाओं से अलग है (चित्र 1)। साहित्यिक एवं शिल्पशास्त्रीय ग्रन्थों में वराह का उल्लेख मिलता है, जिसमें नृ-वराह को ही आदिवराह एवं भू-वराह आदि नामों से जाना जाता है।[1] प्रस्तुत मातृदेवी की प्रतिमा नृ-वराह से संबंधित है। लगभग 30 × 18 सेमी. आकार की यह प्रतिमा बलुआ प्रस्तर पर उकेर कर बनाई गयी है। इसमें त्रिरथ पादपीठ पर वाममुखी दो छोटे वराहों के ऊपर ललितासन में भद्रपीठस्थ[2] देवी का अंकन किया गया है। देवी का दाहिना पैर एक वराह के पीठ पर है। इस प्रकार की वराह पर आरूढ़ देवी की प्रतिमाएँ विभिन्न स्थलों से ज्ञात हैं।[3] देवी का प्रभामण्डल सादा है, जिसके दोनों पार्श्वों पर अलग-अलग भंगिमाओं में दो सेविकाओं का अंकन किया गया है। दाहिनी सेविका एक पादपीठ पर ललितासनमुद्रा में अपने दोनों हाथों से वराह के बच्चे को लिए प्रदर्शित है। शिशु वराह का मुख बायीं तरफ है। जटाजूटधारी सेविका के कानों में कुण्डल का अंकन है। बायीं ओर की सेविका त्रिभंगमुद्रा में दर्शायी गयी है, जिसके दाहिनें हाथ में वराह शिशु है, किन्तु बायें हाथ में ली गई वस्तु का अंकन स्पष्ट नहीं है। सेविका के केश कन्धों तक लहराते हुये प्रदर्शित हैं। वाराही की मुख्य प्रतिमा अपने हाथों में शिशु को लिए है। शिशु का बायाँ हाथ माता के वक्ष पर है, जो माँ एवं शिशु के वात्सल्य प्रेम को दर्शा रहा है। शिशु के कान अपेक्षाकृत बड़े हैं तथा उसका मुख भी वराह सा प्रतीत हो रहा है। देवी के शरीर पर आभूषण स्पष्ट हैं और वस्त्र घुटने तक हैं। देवी के बड़े खुले नेत्र, खुला हुआ मुख, कन्धे तक लहराते केश भयंकरता का आभास दिलाते हैं। देवी के दोनों पैरों के ठीक नीचे दोनों ओर दो सेविकाओं को भिन्न-भिन्न

मुद्राओं में प्रदर्शित किया गया है। दाहिनी ओर की सेविका कट्यलम्बित मुद्रा में दायें हाथ से कदाचित वराह शिशु को धारण किये हुये है। बायीं ओर की सेविका अपने स्वामिनी की ओर मुख किये पादपीठ पर आसनस्थ है। इसके भी हाथों में संभवतः वराह शिशु है। प्रस्तुत वाराही की प्रतिमा उत्तर मध्यकाल की प्रतीत होती है।

वाराणसी क्षेत्र से वराह की विविध स्वरूपों वाली प्रतिमाएँ प्रकाश में आयी हैं।[4] मानमन्दिर घाट पर वाराही मन्दिर की उपस्थिति क्षेत्र में वराह उपासना के महत्त्व को दर्शाती है। पद्मपुराण,[5] कूर्मपुराण[6] एवं लिंगपुराण[7] के अनुसार काशी को वाराह क्षेत्र के रूप में मान्यता प्राप्त है। स्कन्दपुराण,[8] देवीपुराण[9] एवं ब्रह्मवैवर्त[10] आदि पुराणों में वाराही की गणना सप्तमातृकाओं में की गयी है। कहीं-कहीं सात के स्थान पर आठ मातृकाओं का भी उल्लेख मिलता है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण,[11] रूपमण्डन[12] एवं अंशुमद्भेदागम[13] में वाराही के विविध स्वरूपों का वर्णन किया गया है। मत्स्यपुराण में उल्लिखित दो सौ देवियों की सूची में भी वाराही सम्मिलित हैं।[14] देवी को लोगों का उपकार तथा समस्त व्याधियों को दूर करने वाला बताया गया है।[15]

भारतीय समाज में वराह की उपासना का प्रचलन प्राचीन काल से रहा है। इसका महत्त्व समाज में धार्मिक उपासना के साथ-साथ आर्थिक क्रिया कलापों में भी हैं उदाहरणार्थः कृषि कार्य हेतु वराह उपासना का उल्लेख भारतीय वामय में मिलता है। अथर्ववेद के पृथ्वीसूक्त के एक मन्त्र में उल्लिखित है[16] -

'वाराहेण पृथिवी संविदाना सूकराय विजिहीते मृगाय।'

इसका भाष्य करते हुए पण्डित सातवलेकर ने लिखा है कि 'यह (पृथिवी) भूमि (वाराहेण) उत्तम जल देने वाले के साथ (संविदाना) अच्छी तरह पाकर अर्थात् अच्छी बरसात वाली होकर (शूकराय) अच्छी किरण वाले (मृगाय), अपनी किरणों से अपवित्रता को पवित्र करने वाले सूर्य के चारों ओर (विजिहीते) विशेष रूप से जाती है।[17] अर्थात् अच्छा जल बरसाने वाले मेघ से युक्त सूर्य जिसकी अपवित्रता को अपनी किरणों से हटा देता है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण में स्पष्ट रूप से कृषि कार्य आरम्भ करने से पूर्व वराह की पूजा का उल्लेख है।[18]

वाराहोपासना को सृष्टि (प्रजनन) एवं उर्वरता के प्रतीक के रूप में भी वर्णित किया गया है।[19] हिरण्याक्ष वध को अनावृष्टिकारक शक्तियों की विजय का रूपक मानना ही वराह के सृष्टि-प्रतीक को स्वीकार करना है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण में एक स्थान पर नदी पार करने के समय वराह की पूजा करने का विधान है।[20] यहाँ यह उल्लेखनीय है कि कुरु पुरास्थल जहाँ से यह वाराही प्रतिमा प्राप्त हुयी है वरुणा नदी के समीप ही है।

श्राद्ध संस्कार में भी वराह उपासना का उल्लेख मिलता है। वराह के सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक महत्त्व को देखते हुए विभिन्न संहिताओं, पुराणों एवं आगम ग्रन्थों में इसे सम्मानपूर्वक स्थान दिया गया। विष्णु के वराह अवतार की पूजा, वाराह द्वादशी व्रत एवं वराह जयन्ती मनाने की परम्परा वराहोपासना की लोकप्रियता को प्रदर्शित करती है।

काशी क्षेत्र में इस प्रकार की प्रतिमाओं का अध्ययन लोक धर्म एवं उसके प्रभाव को ज्ञात करने का महत्त्वपूर्ण साधन है। ऐसी प्रतिमायें जहाँ एक ओर ग्रामीण परिवेश में व्याप्त सामाजिक एवं धार्मिक अवस्था का ज्ञान कराती हैं वहीं दूसरी ओर समाज में व्याप्त विभिन्न प्रकार की प्रथाओं, रीति-रीवाजों, त्योहारों, पूजा-पाठ, देवी-देवताओं एवं मूर्तिशिल्प में छिपे हुए उपयोगी तथ्यों को ऐतिहासिक संधि से जोड़कर ग्रामीण अंचल की संस्कृति के अनछुये पहलूओं को उजागर करती हैं।

संदर्भः

1. गोपीनाथ राव, एलिमेंट ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी, वाल्यूम-प्रथम, प्रथम खण्ड, मद्रास, 1914, पृ.132-134।
2. नीलकण्ठ पुरुषोत्तम जोशी लाइफ इन एंशियन्ट उत्तरापथ, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, 1967, पृ.58।
3. आर.सी. अग्रवाल, 'सम इंट्रेस्टिंग स्कल्पचर ऑफ वाराही फ्राम नार्थ इण्डिया', 'भारती', शोध पत्रिका, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, संख्या 12-17: 1968-71, पृ.134-136, छायाचित्र-IV.
4. सुरेन्द्र कुमार यादव, 'वारुणेय क्षेत्र में लोक धर्मः वाराह प्रतिमा के विशेष संदर्भ में', 'भारती', शोध पत्रिका, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, संख्या 31: 2006-2007, पृ.187-192।
5. पद्मपुराण, 1, 37, 6।
6. कूर्मपुराण, 1, 35, 5।
7. लिंगपुराण, तीर्थकल्प पृ.98।
8. स्कन्दपुराण, काशीखण्ड 83.33।
9. देवीपुराण, 87।
10. ब्रह्मवैवर्तपुराण, प्रकृतिखण्ड, 64.87-88।
11. विष्णुधर्मोत्तरपुराण, 122, 17।
12. रूपमण्डन, 5, 69-68।
13. गोपीनाथ राव, एलिमेंट्स ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी, वाल्यूम - प्रथम, प्रथम खण्ड, मद्रास, 1914, पृ.150-151।
14. वासुदेवशरण अग्रवाल, मत्स्य पुराण ए स्टडी, वाराणसी, 1963, पृ.276।
15. रूपमण्डन् 5।। 68।।
16. अथर्ववेद, 12/1/48।
17. पण्डित सातवलेकर, अथर्ववेद का सुबोध भाष्य 12/1/48।
18. विष्णुधर्मोत्तर पुराण 3/119/6 - वराहं पूजयेद्देवं प्रारम्भे कृषिकर्मणि।
19. जे.गोण्डा, एस्पेक्ट्स ऑफ अर्ली वैष्णविज्म, उट्रेच्ट, 1954, पृ.139-145।
20. विष्णुधर्मोत्तरपुराण 3/119/2 - समुद्रपोत यात्रायां मत्स्यं संपूजयेद्विभुम्।
    वराहं वा महाभाग नद्युत्तारे तथैव च।।

टिप्पणीः

वाराही की अब तक कोई बीस प्रकार की प्रतिमाएँ मिल चुकी हैं। इनमें मानवमुखी, द्विमुखी, मत्स्ययुक्ता, वराह-गरुड़-शेषनाग-कच्छप-सिंह-महिष आदि का वाहन रूप में प्रयोग करने वाली एवं कुम्भधारिणी वाराही प्रतिमाओं का समावेश है। चण्डोच्चण्ड नामक बालक के साथ भी देवी का अंकन हुआ है। वाराणसी की प्रस्तुत विचाराधीन प्रतिमा इन सबसे अपनें ढंग की अनोखी है, क्योंकि यहाँ साधारण बालक के अतिरिक्त देवी के साथ एकाधिक 'वराह शिशुओं' को भी अंकित किया गया है। आसन पर सामने की ओर बने दो वराह भी स्पष्ट हैं। प्रतिमा घिसीपिटी होने के कारण छोटे वराहों की ठीक संख्या का निश्चय कठिन है। - संपादक